रिश्ते उर्फ़ गरुड़ पुराण

मुक्ता

रिश्ते उर्फ गरुड़ पुराण

कहानी

मुक्ता

रिश्ते उर्फ गरुड़ पुराण

इधर जब भी लिखने बैठती हूँ शब्द धुँधलाने लगते हैं, केंद्रबिंदु पर उँगली रखते ही कोने सरकने लगते हैं। हर कोने पर कुर्सीनुमा तख्तेताऊस दिखाई देते हैं। चेहरे लगभग एक-से। सभी घिसटकर कलम के ऊपर चींटी-सी कतार बनाते दिमाग में घुसने लगते हैं। मैं कुछ लिख नहीं पाती हूँ। क्या इस लिख न पाने के कारण पर बहसें होंगी ? लंबी बहसें...बहसों की राजनीति...

राजनीति के नाम पर सुप्रिया नंदी की याद आती है, " बस थोड़ा बहुत साँप- नेवले का खेल आदिकाल से चला आ रहा है। अपना काम पहले। याद रखना पाँच पतियों के होते हुए भी द्रौपदी सती थी। द्रौपदी ने शासन किया। अन्य सतियों ने जीवन- भर सतीत्व की परीक्षा दी। "

आज एक सपना देखा। तंबुओं से तना विशाल मिलिट्री कैंप। बीच में आग। मिलिट्री कैंप में पियानो और सुरबहार का वर्णसंकर कोई वाद्य, जिसे बजाकर मानसपुत्र कोई धुन निकाल रहा है। लपटों के अक्स मानसपुत्र के चेहरे पर उभर रहे हैं। धुन इन्द्रधनुष जैसी कैंप में फैल रही है। कोहरे जैसी सफेद धुन पर मयूरी नीले अक्षर टाइप हो रहे हैं-अ-र-विं-द।

विचित्र सपना था। जागने पर भी हैरान हूँ मानसपुत्र कौन-सा वाद्य बजा रहा था ? धुन अरविंद। क्या व्यक्ति भी धुन में बदल सकता है? एक व्यक्ति को महानगर में, धुन में बाँध पाना क्या संभव है ? फिर मानसपुत्र से अरविंद कभी मिला हो, ऐसी एक भी घटना मुझे याद नहीं। अरविंद से मेरी पहली मुलाकात आकाशवाणी में हुई थी।

आकाशवाणी में ' उत्तर आधुनिकता ' पर परिचर्चा थी। अरविंद अखबार का संपादक होने के साथ एक प्रबुद्ध पत्रकार की हैसियत से वहाँ मौजूद था। गोष्ठी का संचालन मैं कर रही थी। उसके तर्कों और उठाए गए प्रश्नों से मैं प्रभावित थी, खास तौर पर साहित्य के पाखंड पर उसके विचारों से। " समाज में हर तरह की समस्याएँ हैं।

अखबार में पाँच साल की बच्चियों से लेकर अस्सी वर्ष की वृद्धा तक से बलात्कार की घटनाएँ हो रही हैं। इन घटनाओं पर समाज में इतना हंगामा नहीं होता लेकिन इनमें से कोई सच्चाई साहित्य में आ जाए तो हंगामा हो जाता है। "

गोष्ठी समाप्त होने पर चाय की चुस्कियों के बीच औपचारिकता हटी, " मैंने आपको पढ़ा है, कहानी, लेख, फीचर, खास तौर पर आपकी तीखी टिप्पणियों से मैं प्रभावित हूँ। मैं आपको आपकी नई कहानी सहित आमंत्रित कर रहा हूँ। "

कहानी छपने पर अरविंद का फोन आया। मैंने धन्यवाद कहकर भिजवाने का अनुरोध किया।

" पूरे एक हफ्ते से मैं आपका इंतजार कर रहा हूँ आप कहती हैं भिजवा दीजिए। "

चुंबक-सा खिंचाव था इस वाक्य में, मैंने बदहवासी में साड़ी बदली। बस से दफ्तर पहुँचने में एक घंटा लगा। सीढ़ियाँ चढ़कर ऑफिस में घुसते ही मैं चौंक पड़ी। कुर्ता-पायजामे में एक विशेष कोण में सिर झुकाए विवेक भैया कुर्सी पर मौजूद थे। पूरे कमरे में मार्क्स, काफ्का चहलकदमी करने लगे। मैं ठीक कुर्सी के सामने खड़ी हो गई। मैंने पहली बार अरविंद का भरपूर निरीक्षण किया। वैसा ही माथा, वही आँखें, एक विशेष कोण में बिलकुल विवेक भैया।

" अरे! खड़ी क्यों हैं, बैठिए। " वह मुस्कुराया।

वही बेचैन हँसी मार्क्स, काफ्का को चूमती और खारिज करती हुई।

" यह आपकी कहानी। "

मैं अखबार उलट-पुलट रही थी। विवेक भैया चारों ओर घूम रहे थे।

" आपकी शक्ल मेरे भाई से मिलती है, एक खास ऐंगिल में बिलकुल ही... "

"क्या आप इन सब बातों पर विश्वास करती हैं ?"

सन्न से जैसे सिर से हथौड़ा टकराया हो। यानी...विवेक भैया! जीते-जागते विवेक भैया! मेरी रगो में बहते विवेक भैया...

" मेरा मतलब है भाई भाई है और रिश्ते...अपनी जगह...जैसे..."

" मैं समझ रही हूँ यह सब बुर्जुआ हैं। दरअसल मैं एक कस्बे से आई हूँ। "

" यही वह बिंदु है जहाँ हम एक साथ हैं। मैं भी कस्बे का रहने वाला हूँ। मेरे पिता अध्यापक थे। अब वे जीवित नहीं हैं। "

बातों का रुख राजनीति की ओर मुड़ गया था। वह स्वांत: सुखाय कविता लिखता है यह मैं जान चुकी थी। कभी-कभी उसके फोन आते। औपचारिकता के दायरे में ही हमारे रिश्ते सिमटे हुए थे।

साहित्य अकादमी लाइब्रेरी में मानसपुत्र अचानक मिला। इधर बहुत दिनों से वह दिखाई नहीं दिया था। उससे एक बार मिलना महीनों की रिक्तता भर देता है। मानसपुत्र संबोधन सुनते ही उसका चेहरा लाल हो जाता है और बिंबफल जैसे होंठों से पंक्तियों के बीच हवा का प्रवेश बढ़ जाता है। निराला के प्रति उसका लगाव देखकर ही मुझे लगता है यदि वह उनके समय में जन्मा होता तो निराला के दुखों में कुछ कटौती जरूर हुई होती। निराला का मानसपुत्र संबोधन उसे राममुद्रिका जैसा प्रिय है।

लाइब्रेरी में परेशान-सा वह किताब ढूँढ़ रहा था।

" कोई विशेष किताब ढूँढ़ रहे हो ?"

" तुम ?" वह चौंका। " हाँ बहुत खास। "

" किसकी है ?"

" मेरी अपनी ही, यहीं इसी शेल्फ में रहती थी, दिख नहीं रही। यहाँ आकर मैं सबसे पहले अपनी किताब ढूँढ़ता हूँ। "

मैं हँसी रोक न सकी। लाइब्रेरी में बैठे लोग घूरने लगे।

" चलो बाहर चलते हैं। बाद में ढूँढ़ूँगा। " लॉन में बैठकर मैं उसे अपनी परेशानियाँ सुनाती रही, " विजय का तबादला होनेवाला है। रेखा का फाइनल है। बब्बू अभी छोटा है। मैं साथ जा नहीं सकती। यह पत्रकारिता की भाग-दौड़...दिल्ली के खर्च...कैसे सब होगा ?"

" मैंने तुम्हें पहले ही कहा है, एक उपन्यास लिख डालो। पत्रकारिता के कोई मायने अब नहीं हैं। आज के पत्रकारों को दूसरों को नीचा दिखाने में ही आनंद आता है

तभी उनका लिखा सबसे पहले नाली में जाता है। "

" लेखक...लेखक भी पत्रकार हैं। "

" उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। कहाँ पैदा हो रहे हैं अब निराला, प्रेमचंद, रेणु। विनम्रता से अच्छे साहित्य का जन्म होता है। आज लेखक संपादक की कुर्सी पर बैठा होता है तो वहाँ केवल कुर्सी होती है। कलम पर वह स्वयं आसीन होता है। " उसकी आँखें हथेलियों में आ गई थीं।

मैं एक दरवाजा ढूँढ़ रही थी।

" लेकिन मैंने पत्रकारिता एक मिशन के तहत शुरू की थी। साहित्य कुछ बुद्धिजीवियों तक ही पहुँचता है आम लोगों तक पत्रकारिता की पहुँच है। "

" यह भ्रम है। एक अच्छी कहानी में वह ताकत है कि वह बार-बार पढ़ी जाती है, किसी संवेदनशील को आमूल परिवर्तित कर सकती है। "

" अच्छा साहित्य बुद्धिजीवियों से होकर आम लोगों तक पहुँचता है। " बातों के बीच व्यवधान पड़ा।

पुस्तकालय की ओर जाते हुए सुकांत गंधर्व मुझे देखकर लॉन की ओर मुड़ आए।

" कैसी हैं ? बहुत दिनों बाद दिखीं। कल अखबार में आपकी कहानी पड़ी थी। अच्छी लगी। लेकिन उसमें आपने पुरुष पात्र को बहुत गिराया है। "

" वह कैसे ? क्या एक पुरुष दो महिलाओं से प्रेम नहीं कर सकता या एक स्त्री..."

" नहीं-नहीं, ऐसा नहीं..."

" तो फिर ?"

" अभी जल्दी में हूँ। "

" ठीक है लेकिन जहाँ तक गिराने का प्रश्न है मेरे पिता भी पुरुष हैं, मेरा भाई भी और मेरा बेटा भी पुरुष है। बस, स्थितियाँ हैं, जो देखा, जो भोगा वही लिखा है। "

" कभी मिलिएगा। विस्तार से बातें होगी। "

उनके जाने के बाद मानसपुत्र ने उस कहानी के बारे में पूछा था। बस स्टॉप पर भी